पर्यावरणीय समाज में जनजातियों की स्थिति

डॉ0 अभय प्रताप सिंह*

पर्यावरण का तात्पर्य उन समस्त वस्तुओं से है, जो व्यक्ति को चारों ओर से घेरे हुए है तथा उसे प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है।'' इनमें प्राकृतिक प्रदत्त एवं मानव निर्मित वस्तुएँ दोनों शामिल होती हैं। प्राकृतिक सिस्टम, चाक्रीय रूप से चलाय मान है (उदाहरणः जल चक्र, कार्बन चक्र, नॉइट्रोजन चक्र इत्यादि)। जब यह चक्रीय प्रक्रम निर्बाध रूप से चलती है तो पर्यावरण शुद्ध रहता है, किन्तु जब इस चक्रीय प्रक्रम में बाधा उत्पन्न होती है तब पर्यावरण अशुद्ध होने लगता है जिससे जीव–अस्तित्व ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण ब्रम्हाण्ड के अस्तित्व पर खतरा उत्पन्न कर देता है।

पिछले तीन–चार दशकों से औद्योगीकृत देशों में इतनी तीव्रता से औद्योगीकरण हुआ है कि कारखानों से निकलने वाली विषैली गैसें, विषाक्त एवं हानिकारक तरल पदार्थों एवं रासयनिक तत्व पर्यावरण को इतना अधिक प्रदूषित किया है कि यह मात्र उस राष्ट्र के ही लिए नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व हेतु खतरा उत्पन्न कर दिया है। कभी–कभी तो संयुक्त राज्य अमेरिका के झील प्रदेशों के कारखानों से निकला विशाक्त तरल पदार्थों के झीलों में बहने से ढ़ेरों सारी मछलियां काल की मुँह में समा चुकी हैं। और यहीं स्थिति जापान के आस–पास के समुद्र की स्थिति है। यह भी अनुमान लगाया गया है कि यदि भूमध्य सागर के आस–पास स्थित कारखानों से यूहीं विशैली पदार्थों का निष्कासन होता रहा और यदि इसका उचित प्रबन्धन नहीं किया गया तो आगामी लगभग 20 वर्षों में भूमध्य सागर जैविक रूप से मृत हो जायेगा। अब तक भूमध्य सागर के लगभग आधे जीवों का अस्तित्व नष्ट हो चुका है। इतना ही नहीं इंग्लैण्ड, जर्मनी एवं जापान क अति औद्योगिक क्षेत्रों द्वारा इतनी तेजी से विषैली गैसों का वायुमण्डल में विसर्जन किया गया है कि वहां के ही नहीं बल्कि अन्य राष्ट्रों के जीवों हेतु भी संकट खड़ा कर दिया है। भारत में भी अहमदाबाद, बड़ौदा के आस–पास स्थित पेट्रोलियम, पैट्रो रसायन, उर्वरक तथा अन्य रासायनिक उद्योगों ने भी वायुमण्डल, जलमण्डल एवं थलमण्डल को प्रदूषित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। मुम्बई एवं कोलकाता के आस–पास के कारखानों ने भी समुद्र के समीपस्थ क्षेत्रों तथा हुगली नदी को भारी मात्रा में प्रदूषित किया है। इन खाड़ियों में रहने वाली मछलियां जो विशैली तत्वों से प्रभावित हैं उनकी प्रयोग मानव–मस्तिष्क एवं स्नायुमण्डल संबंधी व्याधियां उत्पन्न करती है इसका उदाहरण जापान देश है जहां ऐसी मछलियों के प्रयोग से बहुत सारे मानव को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा है। अति औद्योगीकरण ने जिस तरह से पर्यावरण को प्रदूषित किया है, इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि ब्रम्हाण्ड के समस्त जीव–तन्त्र को तेजी से नष्ट किया है और इसी का देन है कि आज मानवजाति के साथ–साथ समस्त जीवों को विषम परिस्थितियों (सूखा, बांढ, अकाल, भूकम्प, सुनामी, पृथ्वी तापन, आजोन परत का क्षरण इत्यादि) का सामना करना पड़ रहा है। जबकि इसमें मुख्य भूमिका मानव जाति का ही रहा है और परिणाम समस्त जीव तन्त्र को भुगतना पड़ रहा है जो उचित नहीं है।

जनजातियों के लोग जंगलो में और पहाड़ियों पर रहते है। जनसंख्या के बढ़ते दबाव तथा उपनिवेषीय आकांक्षाओं के कारण बाहर के व्यक्ति भी जनजाति क्षेत्रों में बसने लगे। अपने पैसे की शक्ति से वे ऋण की सुविधा लोगों को घर बैठे उपलब्ध कराने लगे। प्रारम्भ में तो इसने जनजातियों को राहत पहुंचाई परन्तु धीरे–धीरे यह प्रणाली शोषण करने लगी।

* एसोसिएट प्रोफेसर समाजशास्त्र विभाग, राजा श्री कृष्ण दत्त पी0जी0 कालेज जौनपुर

इरावती कर्वे का मत है कि भारतीय जनजातियों का स्थानीय एवं प्रादेशिक राजनीति में सारे इतिहास के दौरान और विशिष्ट रूप से मध्यकाल में दबदबा रहा है। पिछले डेढ़ सौ–दौ सौ वर्षो से जनजातियों के सामाजिक राजनीतिक जीवन में बाह्य सम्पर्क के कारण अनेक परिवर्तन हुए हैं, परिणामस्वरूप उनमें अनके आन्दोलनों का जन्म हुआ। इन आन्दोलनों की उत्पत्ति के कारणों उद्देश्यों, संगठनों एवं परिणामों में पर्याप्त भिन्नता पायी जाती है।[6]

जनजातियों का धीरे–धीरे परिवर्तन के साथ शोषण का गति बढ़ता गया। कानून की नई–नई खुली कचहरियों ने शोषकों की सहायता की। पहले आर्थिक और बाद में सामाजिक और सांस्कृतिक शोषण ने जनजातियों के नेताओं को उत्तेजित कर दिया और जिससे जन आन्दोलन और संघर्ष भी बढ़े। प्रारम्भ में वे शोषण करने वालों और उनके अधिकारों को हड़पने वालों के विरूद्ध थे, परन्तु अन्त में वे सरकार और शासकों के विरूद्ध हो गये।

पर्यावरणीय समाज ने जनजातियों को स्वतंत्रता पूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य किया परन्तु जंगलों के कानूनों और नियमों में कठोरतापन, उसमे असन्तोष एवं समस्या को जन्म दिया। जिसके प्रमुख कारण निम्न है।

1. जनजाति के लोगों के पुनर्वास के लिये सरकारी कार्यवाही में अकुशलता।
2. ऋण की सुविधाओं का अभाव।
3. सुधार उपायों के क्रियान्वयन में पक्षपात।
4. जनजातिय समस्याओं को हल करने में राजनीतिक अभिजनों में अभिरूचि और सक्रियता का अभाव।
5. यातायात एवं संचार के साधनों की प्रचुर उपलब्धता का अभाव हैं।
6. नवीन संस्कृतियों के सम्पर्क ने भोले आदिवासियों को अपनी ओर आकर्षित किया किन्तु, आदिम एवं नवीन संस्कृतियों के बीच इतना अन्तर है कि वे नवीनता से अनुकूलन नहीं कर पाये।
7. नयी वन नीति के कारण जंगलों को काटना मना कर दिया गया, अनेक क्षेत्रों में शिकार करने व शराब बनाने पर भी नियन्त्रण लगा दिया गया जिसके कारण आदिवासियों को जीवनयापन के परम्परात्मक तरीकों के स्थान पर नवीन तरीके अपनाने पड़े। उन्हें जंगलों से लकड़ी काटने, स्थानान्तरित खेती करने एवं अन्य वस्तुओं को प्राप्त करने की मनाही कर दी गयी। वे बाध्य होकर अपने मूल निवास को त्याग कर चाय बागानों, खानों और फैक्ट्रियों में कार्य करने के लिये चले गये। अब वे भूमिहीन कृषि श्रमिकों एवं औद्योगिक श्रमिकों के रूप में कार्य करने लगे। इन लोगों की मजबूरी का लाभ उठाकर ठेकेदार एवं उद्योगपति इनसे कम मजदूरी पर अधिक काम लेने लगे। इन लोगों के निवास और कार्य करने की दशाएं भी दयनीय हैं। इस प्रकार से इनका आर्थिक शोषण किया गया है।
8. सभ्य समाज के लोग जनजातियों में प्रचलित युवा–गृहों को हीन दृष्टि से देखते है। युवा–गृह आदिवासियों में मनोरंजन, सामाजिक प्रशिक्षण, आर्थिक हितों की पूर्ति का साधन एवं शिक्षा का केन्द्र था, किन्तु अब यह संस्था समाप्त हो रही है जिसके फलस्वरूप कई हानिकारक प्रभाव पड़े हैं।
9. बैकिंग सुविधाएं आदिवासी क्षेत्रों में इतनी अपर्याप्त है कि आदिवासियों को प्रमुखतया साहूकारों पर निर्भर रहना पड़ता है। आदिवासियों की इसलिये यह मांग है कि कृषि ऋण राहत कानून बनाये जायें जिससे कि उन्हें उनकी गिरवी रखी हुई जमीन वापस मिल सके।
10. जनजातीय समाज घने जंगलों, पहाड़ी भागों एवं तराई क्षेत्रों में निवास करती है। इन भागों में अनेक बिमारियां पायी जाती हैं। गीले एवं गन्दे कपड़े पहने रहने के कारण इनमें कई चर्म रोग हो जाते हैं। इन लोगों में मलेरिया, पीलियॉ, चेचक, राहे, अपच एवं गुप्तांगों की बीमारियां भी पायी जाती हैं। एवं बीमारियों के इलाज के लिए चिकित्सालयों का अभाव है।

11. जनजातियों में शिक्षा का अभाव सा है और वे अज्ञानता के अन्धकार में पल रही हैं। अशिक्षा के कारण वे अनेक अन्धविश्वासों, कुरीतियों एवं कुसंस्कारों से घिरे हुए हैं। आदिवासी लोग वर्तमान शिक्षा के प्रति उदासीन है क्योंकि यह शिक्षा उनके लिए अनुत्पादक है।
12. आदिवासियों और गैर आदिवासियों के बीच सम्बन्ध बिगड़ रहे है और गैर–आदिवासी अपनी सुरक्षा हेतु अधिकाधिक रूप से अर्द्धसैनिक बलों पर निर्भर हो रहे हैं। आदिवासियों के लिये पृथक राज्यों की मांग ने मिजोरम, नागालैण्ड, मेघालय, मनीपुर, अरूणाचल प्रदेश और त्रिपुरा में विद्रोह का रूप ग्रहण कर लिया है। पड़ोसी देश, जो भारत के विरूद्ध है, इन भारत विरोधी भावनाओं का अनुचित लाभ उठाने में सक्रिय है। इन राज्यों में जो आदिवासी क्षेत्रों से घिरे हुए हैं विदेशी नागरिकों की घुसपैठ, बन्दूकों की तस्करी, मादक पदार्थों का व्यापार और तस्करी बहुत भीषण समस्याएं है।[9]

यद्यपि जनजातियों के सम्बन्ध में संवैधानिक प्रयास– भारत के संविधान व्यवस्था में अनुच्छेद 46 में राज्य के नीति निर्देशक तत्वों में यह स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया कि राज्य कमजोर समूहों, विशेषकर अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के शैक्षणिक एवं आर्थिक हितों को विशेष रूप से ध्यान रखेगा एवं सामाजिक अन्याय एवं सभी प्रकार के शोषण से संरक्षण प्रदान करेगा।[10] संविधान के बारहवें भाग के अनुच्छेद 275 के अनुसार केन्द्रिय सरकार राज्यों को जनजातीय कल्याण एवं उनके उचित प्रशासन के लिए विशेष धनराशि देगी। संविधान के पन्द्रहवें भाग अनुच्छेद 325 में कहा गया है कि किसी को भी धर्म, प्रजाति, जाति एवं लिंग के आधार पर मताधिकार से वंचित नहीं किया जायेगा। अनुच्छेद 146 के अन्तर्गत जनजातीय हितों को देखभाल हेतु कुछ राज्यों में पृथक मंत्रियों की नियुक्ति का प्राविधान बनाया गया। सोलहवें भाग अनुच्छेंद 330 व 332 वें अनुच्छेद में लोक सभा एवं राज्य विधान सभाओं में अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के लिए स्थान सुरक्षित किये गये हैं। अनुच्छेद 335 में आश्वासन देता है कि सरकारी नौकरियों में इनके लिए स्थान सुरिक्षत रखेगी। अनुच्छेद 338 में राष्ट्रपति द्वारा अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के लिए विशेष अधिकारी की नियुक्ति की व्यवस्था की गयी है। यह अधिकारी प्रतिवर्ष अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करेगा। पाँचवी अनुसूची में जनजातीय सलाहकार परिषद की नियुक्ति की व्यवस्था है जिसमें अधिकतम बीस सदस्य हो सकते है, जिनमें से तीन–चौथाई सदस्य राज्य विधान सभाओं के अनुसूचित जनजातियों के होंगे। अनुच्छेद 324 एवं 244 में राज्यपालों को जनजातियों के सन्दर्भ में विशेषाधिकार प्रदान किये गये हैं।

जनजातियों के विकास कार्यक्रम में स्वतंत्रता के बाद संविधान सभा ने ए.वी.ढक्कर की अध्यक्षता में एक उप–समिति का गठन किया जिसकी सिफारिशों के बाद जनजाती क्षेत्रों का विकास समस्त भारतीय के विकास का एक अभिन्न अंग बन गया। संविधान के अन्तर्गत जनजाती क्षेत्रों में बंधुआ श्रम पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। परन्तु व्यवहार में ये अधिकांश राज्यों के जनजाती क्षेत्रों में किसी न किसी रूप में विद्यमान है। 1976 में जब बॉन्डेड लेबर सिस्टम (अबोलिशन) एक्ट पास हुआ तो यह पाया गया कि देश के 80ः बंधुआ मजदूर अनुसूचित जाति एंव जनजाति के हैं। साहूकारों और महाजनों को आदिवासियों पर गिरफ्त को ढीला करने के लिये सरकार ने लार्ज एरिया मल्टीपर्पज सोसाइटीज (एल0ए0एम0पीज) गठित की। परन्तु उसके कार्य की संतोषजनक नहीं पाया। बड़ी संख्या में यह पाया कि आदिवासियों को धोखा देकर उनसे बैंक ऋणों पर हस्ताक्षर करवा लिये गये। सहकारी समितियों ने उत्पादन कार्यो के लिये पर्याप्त ऋण नहीं दिये, कृषि और जंगल को छोटी उत्पादित वस्तुएं नहीं खरीदी, और आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं की उचित मूल्य की दुकानें नहीं खोली।

फिर भी इनको अनेको समस्यों का सामना करना पड़ रहा है। अतः जनजातीय शोध संस्थाएओं तथा प्रशिक्षण केन्द्रो को अधिक से अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है और हमें भारत की प्रथम वन–नीति 1948 में बनाई गई जिसमें क्रमशः 1952 एवं 1988 में संशोधन भी किया गया के अनुसार

ग्रामीणों एवं आदिवासी क्षेत्रों के लिए लकड़ी, चारा, ईंधन, छोटी–मोटी वन उपज की सुगमता पर विशेष ध्यान रखना होगा ताकि जनजातियों की दशा में आवश्यक दिशा देकर सुधर किया जा सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शिक्षण एवं शोध अभियोग्यता, प्रतियोगिता साहित्य सीरीज पृ0सं0 192
2. गिलिन और गिलिन, सांस्कृतिक समाजशास्त्र पृ0सं0 282
3. Theodorson and theodorson, A modern Dictionary of Socialogy P.S.26
4. Majumdar D.N.(1968), "Approach to tribal problems" in Vidyarthi L.P. (ed) op. cit.
5. आहुजा राम, सामाजिक समस्याऐ, रावत पब्लिकेशन्स नई दिल्ली पृ0 सं0 155।
6. सिंह (2010) भारतीय संस्कृति में पर्यावरण संरक्षण, प्रज्ञा, 55(02), 2009–10 पर्यावरण विशेषांक, वाराणसी, का0हि0वि0वि0, पृ0–58।
7. मामोरिया, डॉ0 चतुर्भुज, मानव भूगोल के तत्व (1992), साहित्य भवन आगरा पृ0सं0 171
8. हर्सकोविट्स, एम0 जे0 मानव और अपना कार्य 1948